बच्चे की दुनिया को देखने की खिड़की

देवी प्रसाद



पक्षी, छात्र, 12 वर्ष

बच्चों की कला उनकी दुनिया को देखने की एक 'खिड़की' है। बच्चों की दुनिया की इस खिड़की में बरसों तक झाँकने के कारण मुझे एक नई दुनिया का दर्शन हुआ। यह दुनिया सयानों की दुनिया से अलग है। बिना उचित ज्ञान और खुलेपन के, सयानों का बच्चों की इस दुनिया को समझना बड़ा कठिन है।

बहुत-से लोग यह मानते हैं कि बच्चा किसी वस्तु के तीन आयामों वाले रूप को नहीं समझता है, और उसे दो आयामों में नहीं देख पाता, इसलिए वह असलियत का दर्शन नहीं कर पाता। आम इन्सान यह मानता है कि पेंटिंग करने के लिए वस्तु के तीन आयामों को समझना ज़रूरी है। "आखिर बच्चों को भी एक दिन सयाना होना है, इसलिए उन्हें भी सयानापन पाने के लिए सयानों की तरह देखना सीखना चाहिए।" अन्य शब्दों में यह कहा जाता है कि हमें बच्चों को भी बड़ों की तरह देखना सिखाना चाहिए। मैं समझता हूँ कि इस प्रकार की दलील में बालक के प्रति कोई इज़्ज़त नहीं है, और न ही इसमें कोई उचित शैक्षणिक नज़रिया है।

मेरी सूझ ने यह बताया है कि बच्चे के विकास को समझने के लिए एक अन्य प्रकार के दर्शन की आवश्यकता है। विशेषज्ञ शायद इसे 'रोमांटिक' कहेंगे, या फिर अनुभवहीनता। लेकिन मेरा तो यह विश्वास है कि अगर बच्चे को अपनी दुनिया में स्वतंत्र व स्वस्थ वातावरण में रहने दिया जाए, और विकास की अपनी-ही सीढ़ी से ऊपर चढ़ने दिया जाए, तो वह सयानेपन के लिए कहीं अधिक बेहतर तैयार हो सकेगा। एक अच्छे व सन्तुष्ट माहौल में बड़ा हुआ

यह 'सयाना' दुनिया का सामना अधिक होशियारी और शक्ति से कर पाएगा। उसे मानसिक रुकावटों का कम-से-कम मुकाबला करना पड़ेगा।

इसके साथ ही, बच्चों की कला और उनके उस सौन्दर्यबोध का भी प्रश्न आता है जिसे सयाने 'असली' सौन्दर्यबोध मानते हैं। कुछ नामी शिक्षाशास्त्री, जो शैक्षणिक विकास के विशेषज्ञ माने जाते हैं, बच्चों की कला को भी उसी मापदण्ड से तौलते हैं जिससे वे बड़ों की कला को तौला करते हैं। हालाँकि, इनमें से अनेक यह भी मानते हैं कि दोनों में भेद है, और कुछ तो बच्चों की कला के सौन्दर्य से काफी प्रभावित भी हुए हैं। तब भी वे कहते हैं कि हम बच्चों के दृष्टिकोण से बड़ों के परिपक्व काम की बराबरी नहीं कर सकते हैं।

हाँ, ज़रूर। ये दोनों संसार बिलकुल अलग-अलग प्रकार के हैं, इसलिए बच्चे को बड़ों के मापदण्ड सिखाना, और उसे उसी ओर बढ़ाना, बच्चे को अपने संसार से अलग करना है। यह बच्चे को उसके बचपन से वंचित करना हुआ।

दो अलग-अलग दुनिया

बच्चे सृजनात्मक प्रवृत्तियों के द्वारा आत्मप्रकटन करते हैं। यह अनुभव मुझे पूरा-पूरा विश्वास दिलाता है कि बच्चों की कला को किसी भी हालत में बड़ों की आँखों से नहीं देखना चाहिए, और न ही उसे बड़ों की आँखों से जाँचना चाहिए। एक बच्चा जो बड़ों की दुनिया का हिस्सा अभी तक नहीं बना है, जब वह पेंसिल और रंगों से कागज़ पर कुछ करता है, जिसे उसने अपने चारों तरफ की दुनिया से पाया है, तो वह सयानों की आँखों और बुद्धि से देखी और समझी हुई दुनिया से बिलकुल अलग होता है।

बच्चा जो कुछ अपने स्वभाव से करता है, जो उसकी अपनी दुनिया से आता है, वह उसका अपना और केवल अपना ही होता है। सयाने, खास तौर पर बच्चों के माता-पिता, इसे नहीं समझ पाते हैं। वे उनके काम की तारीफ तो करते हैं पर उनके विकास की धारा को नहीं देख पाते, इसीलिए तो उन्हें बच्चे के मानस की आवश्यकताओं और उसके चरित्र को बहुत अच्छी तरह समझने की ज़रूरत है।

बड़ों के मुकाबले बच्चों की तार्किक बुद्धि इतनी अलग प्रकार की होती है कि कभी-कभी तो शंका होने लगती है कि कौन ठीक है और कौन नहीं। फ्रांज़ सिज़ेक ने एक बार कहा था कि "बच्चे का कमाल का तार्किक ढंग बड़ों के गलत तर्कवाद द्वारा नष्ट हो जाता है। गलत शिक्षा देना उनकी आध्यात्मिकता के लिए हानिकारक होता है। बच्चों का सोचना तर्कसंगत होता है।" एक बार एक सात-आठ साल की बच्ची मेरे पास बड़ी परेशानी की हालत में आई। मैंने उससे पूछा,

"तुम इतनी परेशान क्यों हो?" उसने मुझे अपना बनाया हुआ एक चित्र दिखाया। बच्चों का खास अपने ढंग के एक घर का चित्र – घर की दीवार के लिए चौकोर आकार और उसकी छत के लिए एक त्रिकोण।

उसने पूछा, "यह ठीक है न?"

मैंने जवाब दिया, "हाँ, ज़रूर ठीक है।"

बच्ची बोलती गई, "गुरुजी कहते हैं कि यह ऐसे बनाना गलत है। मैंने पूछा 'क्यों?', तो उन्होंने कहा कि छत का किनारा बाहर निकलता हुआ होना चाहिए, नहीं तो बारिश का पानी दीवारों के ऊपर बहेगा।"

बच्ची हठात् हँसने लगी। मैंने उससे पूछा कि वह क्यों हँस रही है।

उसने कहा, "भला चित्र में कभी बारिश पड़ती है?" देखिए, बच्चा कितना तर्कसंगत होता है।

फ्रांज़ सिज़ेक वे व्यक्ति थे जिन्होंने 'चाइल्ड आर्ट', यानी 'बच्चे की कला' शब्द का उपयोग पहली बार किया। उन्होंने बच्चे की आत्मसम्मान की भावना और आत्म-प्रकटन के कलात्मक रास्ते को पहचाना और सम्मान दिया। फ्रांज़ सिज़ेक की दूरदर्शिता के हिसाब से, मैं मानता हूँ कि बच्चे के दिमाग में वह सत्य है जिसे हर माता-पिता को समझना चाहिए और उस पर हमेशा अभ्यास करना चाहिए।

20वीं शताब्दी के कुछ कलाकारों पर बच्चों की कला का बहुत असर हुआ है, जो उनके काम में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। वैसे ही जैसे गुफावासियों और आदिम संस्कृतिवासियों की कला का आधुनिक कलाकारों की कला पर। पर यह कहना ठीक और ज़रूरी होगा कि बच्चों की कला का असर सयानों की कला के असर से बिलकुल अलग होता है। वह अपने में निराला होता है।

मैं पाठकों का ध्यान बच्चों की कला के उस पहलू की तरफ खींचना चाहता हूँ जिसके द्वारा बच्चों की कला की शक्ति और सूझ का पता चलता है, और जो उनकी कुछ समस्याओं की ओर भी हमारा ध्यान खींचता है। खास तौर पर वह पहलू जो परिवार में बच्चे के स्थान की समझ देता है। माता-पिता व शिक्षकों



खिड़की में, छात्रा, 14-15 वर्ष

को जानना चाहिए कि बच्चों की कला की सूझ-बूझ से उनके मानस का एवं उनकी ज़रूरतों व अनुभवों का ज्ञान प्राप्त होता है।

व्यक्ति स्वभाव से ही सृजनशील कलाकार होता है, और जो कुछ वह पाता है, वह निश्चेष्टा के कारण नहीं होता। जो चित्र उसके दिमाग में बनते हैं, ज़रूरी नहीं कि वे उसके मन को भाने वाली वस्तु के ही हों। वह अपने मन के अर्ध-चेतन अवस्था के विचारों को स्वीकारता है, परिवर्तित करता है और उनकी झलक देता है। ये सब उसकी भावनाओं और कल्पनाओं का अंग होते हैं।

अच्छी शिक्षा के लिए कला

मानव समाज को प्राचीन काल से ही गहरा बोध है कि मानव की शिक्षा में कला का स्थान महत्वपूर्ण है। इसका बाल्यावस्था से गहरा सम्बन्ध है। प्लेटो ने लिखा है – "हमें ऐसे कलाकारों और कारीगरों की खोज करते रहना चाहिए जो इस जानकारी में माहिर हैं कि प्रकृति में क्या सुन्दर है। तभी हमारे नवयुवक स्वस्थ वातावरण में रहकर समझेंगे कि जीवन में वह क्या है जो उनके वातावरण को स्वस्थ बनाता है। हमें यह देखना है कि उन्हें बचपन से ही पहचान हो कि क्या सुन्दर है और क्या उचित।"

"और इसीलिए शिक्षा का चरण बड़ा निर्णायक है। इसका कारण यह है कि छन्द और तारतम्य का उनके दिमाग पर गहरा प्रभाव पड़ता है। अच्छी शिक्षा बच्चे में लावण्य और सौन्दर्य को महत्वपूर्ण स्थान देती है। खराब शिक्षा का असर उलटा होता है। उचित शिक्षा इन्सान को कलाकृतियों व प्रकृति की कुरूपताओं या कमियों का एहसास करने की क्षमता भी देती है, और उन्हें नापसन्द करने की दृष्टि भी। जो कुछ सुन्दर है, वह उसका स्वागत करता है, उसे अपनाता है और स्वयं अच्छे चरित्रवाला बन जाता है। ...मेरे विचार में शिक्षा का यही उद्देश्य है।"

यह समझना आवश्यक है कि आत्मा और कला का आपसी बन्धन जीवन में लावण्य का विकास करता है। प्लेटो ने कहा है कि उचित कला-शिक्षा इन्सान को अच्छा और बुरा समझने की शक्ति देती है।

सृजनात्मकता और अनुशासन

सृजनात्मक प्रवृत्तियाँ वह शक्ति प्रदान करती हैं जो स्वभाव से ही मनुष्य को मेल-मिलाप, अनुपात और सम्पूर्णता का अभ्यास कराती है। कला के माध्यम और औज़ार, जैसे – मिट्टी, सुई, ऊन, चमड़ा, लकड़ी, पत्थर, ब्रश-तूलिका, कुम्हार-चाक, आरी इत्यादि अपने स्वाभाविक गुणों से ही कलाकार को ज़रूरी अभ्यास करवाते हैं। वे कलाकार को प्रकृति के नज़दीक ले जाते हैं। वे एकता, सामंजस्य और संवेदना के विशिष्ट

उदाहरण हैं। ये वे कानून हैं जिन पर मानव समाज अपनी एकता और निष्ठा के लिए निर्भर होते हैं।

कला-प्रवृत्तियाँ बच्चे को स्वतंत्रता से परिचित कराती हैं। ये अनुभव उसकी सृजन-शक्ति और कौशल के सम्पूर्ण प्रकटीकरण को उत्साहित करते हैं। सयानी उम्र में इससे स्थायी सुख की अनुभूति मिलती है। कला सचमुच में बालक को अपने से बाहर होने के लिए उत्साहित करती है। बच्चों द्वारा स्वेच्छा से बनाए गए चित्र, उनकी शारीरिक और मानसिक अवस्था का भी स्पष्ट प्रमाण होते हैं। इनके द्वारा उनकी स्वस्थ-अस्वस्थ भावना का पता लगाया जा सकता है।

बच्चे की आन्तरिक दुनिया

मैंने कई परिवारों में देखा है कि जो बच्चे कलात्मक प्रवृत्तियों में लगे रहते हैं, वे अधिक चुस्त और खुश रहते हैं। उनका अपने परिवारों के साथ काफी नज़दीक का सम्बन्ध रहता है, जो उनके लिए आनन्द का स्रोत बन जाता है। यहाँ तक कि काफी छोटी उम्र से ही यदि उन्हें कुछ सरल स्तर की कला के औज़ार मिलें, तो वे उनसे जूझने लगते हैं और कुछ-न-कुछ कीरम-काँटे खींचने लगते हैं। वे उसे बड़े शौक से अपने माँ-बाप को और मित्र व परिवार के लोगों को दिखाते हैं, जिनसे उन्हें अक्सर उत्साहदायक बातें सुनने को मिलती हैं।

तीन-चार साल की उम्र तक बच्चों में बातचीत करने का हौसला नहीं बन पाता, किन्तु अपनी 'कलाकृतियों' के माध्यम से वे उन बड़ों से अच्छा रिश्ता कायम कर लेते हैं जो उनकी बातचीत सुनने के लिए तैयार होते हैं। दरअसल, कलाकृतियाँ बच्चों को वह भाषा देती हैं जिनसे वे अपनी भावनाओं को प्रकट कर पाते हैं। अगर कोई बच्चा आत्मप्रकटन नहीं कर पाता है, तो उसकी मानसिक स्थिति और भावनाएँ अलग स्वरूप ले सकती हैं। वह विध्वंस की तरफ झुकने लग सकता है।

बच्चे को केवल आत्मप्रकटन का मौका ही नहीं, बल्कि उसकी बात सुनने वाले भी चाहिए। ऐसे सुननेवाले



आगे गुरुजी पीछे हम, छात्र, 12 वर्ष

जो उसे सराहना और प्यार दे सकें।

फ्रांज़ सिज़ेक ने अपने एक अनुभव का वर्णन किया है – "एक घण्टे तक पेंटिंग करने के बाद, मैंने एक दर्जन बच्चों के साथ उनके चित्रों पर चर्चा की। वे तीन साल से सात साल की उम्र के थे। चर्चा खत्म करने के बाद, छह वर्ष की बालिका सूज़न सुबक-सुबककर रोने लगी। जब मैंने उससे पूछा कि वह क्यों रो रही है, तो उसने कहा, "आपने मेरे चित्र की तो चर्चा नहीं की।" मैंने उसे बताया, "मैंने चर्चा की थी पर मुझे यह मालूम नहीं था कि तुम तब बाहर चली गई थी। मैंने तुम्हारे चित्र की तारीफ भी की थी।" सूज़न एक शर्मीली बालिका थी।

बच्चे अपने काम की जानकारी दूसरों को देना चाहते हैं। वे अपने आन्तरिक रूप की स्वस्थ छवि देखना चाहते हैं। वे अपने माता-पिता का खुद पर विश्वास देखने के लिए उत्सुक रहते हैं। आखिर परिवार का स्वास्थ्य, उसके रिश्तों की अन्तरंगता पर और एक-दूसरे के व्यक्तित्व की पहचान और सम्मान पर निर्भर होता है।

सृजनात्मक प्रवृत्तियाँ बचपन की हर अवस्था में बच्चे को विचार का आदान-प्रदान करने के लिए हिम्मत देती हैं और साथ-साथ उसे प्रकृति का एक अटूट अंग बनाती हैं। मैं यह विचार शिलर के एक वाक्य के ज़रिए रखना चाहता हूँ – "संस्कृति का एक कर्तव्य यह है कि वह मानव को रूप का भाव दे, अपनी भौतिक ज़िन्दगी में उसके जीवन को कलात्मक बनाए, उसके जीवन में जहाँ भी हो, सौन्दर्य का रास्ता दे। यह इसलिए कि जीवन में सदाचार तभी प्रवेश कर सकता है जब उसकी प्रकृति में सौन्दर्यबोध का विकास हो।"

देवी प्रसाद (1921-2011): कुम्भकारिता कला के प्रख्यात कलाकार, अनुवादक। देहरादून में जन्मे देवी प्रसाद ने 1944 में शान्ति निकेतन से कला स्नातक की उपाधि प्राप्त की। यहाँ उन्हें रवीन्द्रनाथ ठाकुर का सान्निध्य भी प्राप्त हुआ। बच्चों के लिए कला और शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करने सेवाग्राम गए जहाँ गाँधीजी की शिक्षा पद्धति की पत्रिका *नई तालीम* का सम्पादन भी किया। वर्ष 2007 में ललित कला अकादमी द्वारा 'ललित कला रत्न' से सम्मानित।

सभी चित्र: नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित देवी प्रसाद की पुस्तक *शिक्षा का वाहन कला* से साभार।

यह लेख राजकमल प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तक *सृजनात्मक और शान्तिमय जीवन के लिए शिक्षा* के लेख 'बच्चे की दुनिया को देखने की खिड़की' का सम्पादित रूप है।

सन्दर्भ:

1. प्लेटो, द रिपब्लिक; पेंग्विन बुक्स, 1995, पृ. 63।
2. फ्रांज़ सिज़ेक, चाइल्ड आर्ट!, युनिवर्सिटी ऑफ लन्दन प्रेस लि., लन्दन, 1945।
3. हरवर्ट रीड, एजुकेशन थ्रू आर्ट, फेबर एंड फेबर, लन्दन, 1956, पृ. 956।